CC0, In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ॐ

श्रीशङ्करोविजयतेतराम्

परमहंस परिव्राजकाचार्य

भगवत्पाद्–जगद्गुरु श्रीमच्छङ्कराचार्य विरचिता

चर्पटपञ्जरिका

भाषाटीका सहिता

जगद्गुरु आद्य श्रीशङ्कराचार्य

प्रकाशक:-

भाष्यकार जगद्गुरु आद्यशङ्कराचार्य द्वादश शताब्दी

समारोह महासमिति

कार्यालय–श्रीमानव कल्याण आश्रम

पो० कनखल, हरिद्वार (उ० प्र०)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शङ्करावतार भगवान् आद्य श्रीशङ्कराचार्य का संक्षिप्त जीवन परिचय

शङ्कराचार्य का आविर्भाव केरल प्रदेश के कालटी ग्राम में आर्यासती नाम्नी माता के गर्भ से हुआ था, इनके पिता जी का शुभ नाम शिवगुरु था। आचार्यश्री का आविर्भाव काल निर्णायक रूप से विक्रम सम्वत् ८४५ का है। आचार्यश्री ने पिता जी के स्वर्गवास के पश्चात् आठवें वर्ष में ही संन्यास ले लिया था, इनके गुरु का शुभ नाम गोविन्दाचार्य था जिनसे उन्होंने वेदान्त ग्रन्थों का अध्ययन किया।

आचार्यश्री ने भारतीय बौद्धों और जैनियों को पूर्णरूप से परास्त करके विधर्मियों को रोकने के लिए भारत की चारों दिशाओं में चार मठ स्थापित करके पूर्व दिशा के गोवर्द्धन मठ का अध्यक्ष अपने चार पट्टशिष्यों में से पद्मपादाचार्य को बनाया दक्षिण दिशा के शृंगेरीमठ का अध्यक्ष सुरेश्वराचार्य को बनाया तथा उत्तर दिशा के ज्योतिर्मठ का आचार्य पद तोटकाचार्य को सौंपा और पश्चिम दिशा के शारदापीठ का आचार्य पद हस्तामलकाचार्य को दिया।

भगवान् शङ्कराचार्य ने बालपन से ही कितने ही अलौकिक कृत्य किये हैं। शङ्कराचार्य के नाम से लगभग २८० कृतियां हैं जिनमें स्तोत्र आदि भी सम्मिलित है। उक्त चारों मठों के विद्वान् आचार्य भी शङ्कराचार्य के नाम से प्रसिद्ध होते आये है, अतएव इन कृतियों में उन आचार्यों की कृतियां भी सम्मिलित हैं। अतः समस्त कृतियों में आद्यशङ्कराचार्य की कृतियाँ छांटना दुष्कर कार्य है। फिर भी यह तो निश्चित है कि ब्रह्मसूत्र, श्रीमद्भगवद्गीता और उपनिषदों के भाष्य आद्यशङ्कराचार्य द्वारा ही निर्मित हैं जो प्रस्थानत्रयी कहलाते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आचार्यश्री ने इस प्रस्थानत्रयी के भाष्यों को श्री बदरीनाथ की व्यास गुफा और ज्योतिर्मठ की गुफा में निवास करते हुए लिखा है। ज्योतिर्मठ में आचार्यश्री को ज्योति के दर्शन हुए है, इसी कारण इस स्थान का नाम ज्योतिर्मठ है।

ज्योतिर्मठ की गुफा के पास एक विशाल शहतूत का वृक्ष है जो आचार्यश्री के समय का ही है और कल्पवृक्ष कहलाता है।

आचार्यश्री शङ्कर ने ३२ वर्ष की आयु में केदारनाथ प्रस्थान किया। वहां देवताओं ने उनसे कहा कि भगवन्! आपने जिस कार्य के लिए पृथ्वी पर अवतार लिया था वह कार्य समाप्त हो गया है, अब आप कैलाश पधारिये। यह सुनकर शङ्करावतार आचार्यश्री ने कैलाश जाने की इच्छा की; उसी समय प्रथमगणों द्वारा सुसज्जित नन्दी उसके सामने आकर खड़ा हो गया और आचार्य शङ्कर, ब्रह्मा जी के कन्धे का सहारा लेकर नन्दी पर सवार हो अपने धाम चले गये। उस समय उनके मस्तक पर चन्द्रमा चमक रहा था और चारों ओर सिर की जटायें फैली हुई थीं।

आज केदारनाथ में उसी स्थान पर भगवान् आद्यशङ्कराचार्य की मूर्ति स्थापित है, जिसका उद्घाटन द्वारका स्थित शारदापीठ के जगद्गुरु शङ्कराचार्य जी महाराज ने किया था।

विनीत

कल्याणानन्द ब्रह्मचारी

महामन्त्री

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

卐 श्रीहरिः 卐

चर्पटपञ्जरिका

भाषा टीकया सहिता

एक समय भगवत् पाद आद्य श्रीशङ्कराचार्य काशी जी में गङ्गा स्नान के लिए जा रहे थे। मार्ग में एक वृद्ध ब्राह्मण को "डुकृञ्-करणे" धातु को कण्ठ करते हुए देखा। उसकी इस दयनीय दशा को देख उसे निमित्त बना कर आचार्यश्री ने मनुष्य मात्र के लिए जो उपदेश दिया, वही उपदेश "चर्पटपञ्जरिका' नाम से लोक में प्रसिद्ध हुआ। आचार्यश्री कहते हैं।

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दंभज†मूढ़मते।
प्राप्ते सन्निहिते मरणे नहि--
नहि रक्षति डुकृञ्करणे ॥१॥

---

† तीन के अक की बड़ी महिमा है।
ब्रह्मा विष्णु महेश को देखो, ईश्वर के आकार हैं तीन।
गंगा यमुना और सरस्वती त्रिवेणी की धार हैं तीन।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे मूढ़मति मानव ! अब तू वृद्ध हो गया है। मृत्यु अत्यन्त निकट आ चुकी है, इस वृद्धावस्था में "डुकृञ्-करणे" धातु को रटने से तेरी रक्षा नहीं होगी। अतएव सभी प्रकार की सांसारिक आशाओं का परित्याग कर शान्त चित्त से गोविन्द का भजन कर, गोविन्द का भजन कर, गोविन्द का भजन कर,। इसीसे तेरा कल्याण होगा, अन्य किसी उपाय से नहीं ॥१॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते।

वालस्तावत्क्रीडासक्त--

स्तरुणस्तावत्तरुणीरक्तः।

वातपित्त और कफ को देखो आयुर्वेद के सार हैं तीन।
ऋक् यजु अरु सामवेद सब ज्ञान के भण्डार हैं तीन ॥

इसीलिए जब कोई महत्वपूर्ण बात कही जाती है अथवा किसी बात की प्रतिज्ञा की जाती है या किसी बात पर विशेष जोर दिया जाता है तो उस बात को तीन बार दोहराने का नियम है। एक ही बात को तीन बार दोहराने पर वह अकाट्य मानी जाती है। अतएव आचार्यश्री ने भी "भज गोविन्दम्" वाक्य को तीन बार दोहराया है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वृद्धस्तावच्चिन्तामग्नः ,

परमे ब्रह्मणि कोऽपि न लग्न : ॥२॥

हे मूढ़मति मानव ! जब तू बालक था तब खेल-कूद में लगा रहा, जब तू युवा हुआ तब अपनी युवा स्त्री में अनुरक्त हो गया, अब जब कि वृद्धावस्था * को प्राप्त होकर तू मृत्यु के समीप आया है तो व्याकरणादि शास्त्र पढ़ने की अनेक चिन्ताओं में तू मग्न दीखता है। खेद की बात है कि तूने सच्चिदानन्द परब्रह्म परमात्मा के चिन्तन में कभी मन नहीं लगाया। अब तू सावधान मन से निरन्तर गोविन्द का भजन कर, इसीसे तेरे त्रिविध (दैहिक, दैविक, भौतिक) ताप नष्ट हो सकेंगे, अन्य कोई उपाय नहीं है।२।

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दंभज मूढ़मते।

अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं,

दशनविहीनं जातं तुण्डम् ।

---

* वृद्धावस्था के सम्बन्ध में एक सूफी भी कहते हैं कि

जो आ के चली जाए वह जवानी देखी ।

जो आके न जाए वह बुढ़ापा देखा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं,
तदपि न मुञ्चत्याशापिण्डम् ॥३॥

हे मूढ़मते ! वृद्धावस्था के कारण तेरे हाथ पैर आदि शरीर के सभी अंग गल गये हैं। अर्थात् सभी शरीर में झुर्रियां पड़ गई हैं, सिर के केश पक कर श्वेत हो गए है, दांतों के टूट जाने से कपोल पिचक गए हैं। अब तू वृद्ध हो जाने से हाथ में दण्ड लेकर चलता है फिर भी तू आशा पिशाची का पिण्ड छोड़ना नहीं चाहता।

वृद्धावस्था में हस्तपादादि शरीर के अवयव उचित रूप से कार्य नहीं करते और सिर के केश श्वेत होकर यमराज का नोटिस ले आते हैं। दांतों से रहित मुख पोपला हो जाता है। अतएव भोजन भी उचित रूप से न होने के कारण वह ठीक से पचता भी नहीं, जिससे अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं और दुर्बलता उत्तरोत्तर बढ़ती रहती है। ऐसी दशा में वृद्ध पुरुष कांपता हुआ लकड़ी के सहारे से चलता है और यह जानता है कि अब अधिक समय तक यह शरीर नहीं चलेगा फिर भी कितने दुःख की बात है कि मनुष्य सांसारिक वस्तुओं के उपभोग की लालसाओं को नहीं छोड़ता और आशा पिशाची

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में ही मन लगाये रखता है जो सर्वथा अनुचित है। अतः सभी सांसारिक भोगों को त्याग कर शान्त चित्त से मनुष्य को निरन्तर गोविन्द भगवान् का भजन करना चाहिये, इसी में मनुष्य का कल्याण है ॥३॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते।
पुनरपि जननं पुनरपि मरणं,
पुनरपि जननीजठरे शयनम्।
इह संसारे खलु दुस्तारे,
कृपया पारे पाहि मुरारे ॥४॥

हे मूढ़मते! बारम्बार गोविन्द का भजनकर क्योंकि परब्रह्म के ज्ञान के बिना मोक्ष नहीं होता और बिना मोक्ष के आवागमन का अन्त नहीं होता। अनादिकाल से इस संसार में असंख्य बार यह जीव शरीर धारण करता है और असंख्य बार ही उसे वह शरीर त्यागना पड़ता है क्योंकि इस मायामय संसार में जो भी जन्म लेता है उसकी एक न एक दिन मृत्यु निश्चित है। इसीलिये यह लोक मृत्युलोक कहलाता है। इस प्रकार इस जीव को बारम्बार अपनी माता के दुर्गन्ध पूर्ण और कष्टदायक उदर में निवास करना पड़ता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तेरी भी यही दशा है, अतएव तू इस संसार चक्र से मुक्ति पाने के लिये परमेश्वर से प्रार्थना कर कि हे प्रभो ! इस दुस्तर अपार संसार सागर से मुझे पार लगाओ ? मैं आपकी शरण हूँ, आपकी कृपा से ही मेरा उद्धार हो सकता है ॥४॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते ।
पुनरपि रजनी पुनरपि दिवसः
पुनरपि पक्षः पुनरपि मासः ।
पुनरप्ययनं पुनरपि वर्षं
तदपि न मुञ्चत्याशामर्षम् ॥५॥

हे मूढ़मति मानव ! बारम्बार रात्रि, दिन, पक्ष, मास, अयन (उत्तरायण या दक्षिणायन) अधिक मास या क्षयमास तथा बर्ष आए और गए, तथापि तूने आशा और क्रोध नहीं छोड़ा । (आशा च अमर्षश्च समाहार द्वन्द्व) अर्थात् आशा और आशा में बाधा पड़ने पर क्रोध, ये दोनों समान ही हैं । अथवा 'आशा मर्षम्' इस पद में मर्ष शब्द का अर्थ सहन या धैर्य,—आशा उसकी सहनशीलता को नहीं छोड़ती, चाहें जितना समय व्यतीत हो गया हो, आशा उसे सहन करती है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस प्रकार आशा पाश में बंधा हुआ होने से तू किसी भी समय क्लेश से नहीं छूटता। अतएव इन दुखों से छूटने के लिये तू निरन्तर गोविन्द का भजन कर ॥५॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते।
दिनमपि रजनी सायं प्रातः,
शिशिरवसन्तौ पुनरायातः।
कालः क्रीडति गच्छत्यायु,
स्तदपि न मुञ्चत्याशावायुः ॥६॥

हे मूढ़मते! तू निरन्तर गोविन्द प्रभु का भजन कर। एक के बाद दूसरा दिन आता है और चला जाता है फिर रात्रि आती है और चली जाती है। रात्रि के पश्चात् प्रातःकाल होता है और रात्रि आने से पहले संध्याकाल होता है, ये प्रातः और संध्याकाल भी निरन्तर आते और जाते रहते हैं, इस प्रकार वसन्त ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त और शिशिर ये छै ऋतुएं बारम्बार आती हैं और चली जाती हैं। यह काल की क्रीड़ा है जो संसार के साथ क्रीड़ा करता हुआ स्वयं भी बीत रहा है और इस काल क्रीड़ा से मानव की छोटी-सी आयु भी व्यर्थ ही व्यतीत होती चली जाती

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है। जिस प्रकार जीव अपने जीवन के लिये निरन्तर, वायु का इच्छुक रहता है उसी प्रकार मनुष्य अपने को अमर समझता हुआ सांसारिक अभिलाषाओं को नहीं छोड़ना चाहता। यह कितने खेद की बात है कि मनुष्य ने जिस मोक्ष प्राप्ति के लिये जीवन पाया है उसे वह सर्वथा भूल गया है ॥६॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते।
जटिलो मुण्डी लुञ्चितकेशः*
काषायाम्बरबहुकृतवेषः।
पश्यन्नपि न च पश्यति मूढ़ः
उदरनिमित्तं बहुधागूढ़ः†॥७॥

हे मूढ़मति मानव! तू निरन्तर गोविन्द का भजन कर। कभी तू उदर पूर्ति के लिए सिर पर जटायें बढ़ा

---

* पूर्वकाल में 'केशोल्लुंचक' नामक एक सम्प्रदाय था जो अपने केश उखाड़ कर उनके द्वारा बनाये हुए कम्बल को व्यवहार में लाता था। जैनमतानुसार साधु होते समय अपने हाथों से अपने केश उखाड़ने पड़ते हैं, इसलिये उन्हें केशलुञ्च कहते हैं।

†'बहुधागूढ़ः' के स्थानपर 'बहुकृत वेषः' पाठान्तरहै।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कर जटा धारी बना, कभी सिर के सम्पूर्ण बालों को मुड़ाकर मुण्डी बना, तथा कभी तू उत्पादित केश सम्प्रदाय का साधु बना और कभी भगवा वस्त्र धारण कर संन्यासी बना। इस प्रकार तू विविध वेष धारण करता रहा किन्तु हे मूढ़ प्राणी! तू इस असार संसार की क्षणभंगुरता को देखता हुआ भी नहीं देखता। यह बड़े दुःख की बात है क्योंकि तूने मानव होने के नाते ज्ञान चक्षु होते हुए भी उस गोविन्द रूप परब्रह्म से सम्पर्क स्थापित नहीं किया ॥७॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं† भजमूढ़मते।
वयसि गते कः कामविकारः,
शुष्के नीरे कः कासारः,
क्षीणे वित्ते कः परिवारः,
ज्ञाते तत्वे कः संसारः ॥८॥

---

† गोविन्द–गोपालतापनी उपनिषद् में लिखा है कि 'गोविन्दन्मृत्युर्विभेति ॥४॥ व्याख्या–गवा ज्ञानेन वेद्य उपलभ्यः गोविन्दः तस्मात् उपलब्धात् अमृतस्वरूपावाप्तौ मृत्युर्विभेति, भयेन तदा आज्ञाकारी भवति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे मूढ़मति मानव ! तू निरन्तर गोविन्द का भजन कर क्योंकि जैसे अवस्था ढल जाने पर काम विकार नष्ट हो जाता है, जैसे जल के सूख जाने पर तालाब का स्वरूप स्वयमेव नष्ट हो जाता है, जैसे धन नष्ट हो जाने पर परिवार का संगठन छिन्न-भिन्न हो जाने से परिवार का स्वरूप नष्ट हो जाता है अर्थात् धनहीन व्यक्ति के कुटुम्बी जन उसका साथ छोड़कर अन्यत्र चले जाते हैं; उसी प्रकार एक अखण्ड अद्वैत ब्रह्म का बोध हो जाने पर नामरूपात्मकसंसार कष्ट प्रद कैसे रह सकता है ? अर्थात् बन्धनकारी मानव संसार समाप्त कर मनुष्य जीवन मुक्त हो जाता है ॥८॥

इत्यर्थः ॥ अर्थात् गो कहिये ज्ञान के द्वारा जिनको जाना जाता है वे गोविन्द कहलाते हैं, उनकी प्राप्ति होने पर अमृतस्वरूप मोक्ष की प्राप्ति होती है। ऐसी दशा में मृत्यु का कुछ भी भय नहीं रहता, क्योंकि मृत्यु उनसे डरती है और भय के कारण आज्ञाकारी रहती हैं। इसके अतिरिक्त हरिवंश, विष्णुतिलक तथा ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में भी गोविन्द शब्द की सुन्दर व्याख्या दी गई है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते ।
अग्रे वह्निः पृष्ठे भानू,
रात्रौ चिबुकसमर्पितजानुः
करतलभिक्षस्तरुतलवास,
स्तदपि न मुञ्चत्याशापाशः ॥६॥

हे मूढ़मति मानव ! गोविन्द रूप श्री कृष्ण भगवान् का निरन्तर भजन कर । कारण कि शीत निवारक वस्त्रादि के अभाव में तू दिन में तो अपने सम्मुख अग्नि रखता है और तेरी पीठ पर सूर्य की किरणों की उष्णता रहती है, इस प्रकार तू दिन व्यतीत करके रात्रि को अपने घुटनों के मध्य में ठोड़ी रख कर सोता है। भिक्षा पात्र के अभाव में तेरे हाथ ही भिक्षा लेते हैं। और वासगृह न होने से तू वृक्ष के नीचे निवास करता है, फिर भी कितने आश्चर्य की बात है कि तू इतनी दीन-हीन-निर्धन स्थिति में रह कर भी इस असार संसार की माया रूपी आशा की रस्सी के बन्धन से मुक्त होना नहीं चाहता । मनुष्य जीवन का लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है । केनोपनिषद् में श्रुति कहती है कि- इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति, न चेदिहावेदीन्महती

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विनष्टिः । भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥३॥ अर्थात् यदि मानव ने इस लोक में मनुष्य शरीर को पाकर आनन्दमय शुद्ध स्वरूप ब्रह्म को जान लिया तभी उसका जीवन सफल है। यदि मनुष्य ने उस ब्रह्म को नहीं जाना और अज्ञान वश इस मायामय असार संसार के तुच्छ विषयों को प्राप्त करने की आशा में ही आसक्त रहा तो इसमें उसकी बहुत अधिक हानि है, कारण कि वह अपने कर्मों के अनुसार अनेकों ऊंची-नीची योनियों में जन्म लेकर बारम्बार जन्म-मरण आदि के दुःखों को भोगता रहेगा। इससे बड़ी हानि और क्या हो सकती है? अतएव बुद्धिमान् मनुष्य को ज्ञान द्वारा समस्त प्राणियों में परमात्मा को समझ कर मृत्यु लोक की मिथ्या आशाओं से उपराम हो अमृत रूप अमर भाव को प्राप्त करना चाहिये। इस अमर भाव की प्राप्ति और ज्ञान की प्राप्ति के लिये गोविन्द भगवान् का निरन्तर भजन ही एक मात्र साधन है।

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते।
यावद्वित्तोपार्जनशक्त,
स्तावन्निजपरिवारो रक्तः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पश्चाज्जर्जभूते देहे,

वार्त्तां कोऽपि न पृच्छति गेहे ॥१०॥

हे मूढ़मते ! तू अपने परिवार की मानसिक भावना को तो देख ! जब तक मनुष्य धन कमाने में समर्थ रहता है तभी तक उसके कुटुम्बी जन उसके साथ स्नेह करते हैं। पीछे वृद्धावस्था में शरीर शिथिल हो जाने पर जब धन कमाने की शक्ति नहीं रहती, तब उसके घर के मनुष्य उसकी बात भी नहीं पूछते अर्थात् जब तक मनुष्य में धनोपार्जन करने की शक्ति रहती है और यथा-समय उसके उचित खान-पान आदि की व्यवस्था रखते हैं किन्तु जब मनुष्य धन कमाने के योग्य नहीं रहता तब कुटुम्बीजन उसको अपने ऊपर भार स्वरूप समझने लगते हैं, ऐसी दशा में उसके प्रति आदर और स्नेह भाव की समाप्ति के साथ उसके खान-पान और वस्त्रादि की उचित व्यवस्था भी समाप्त हो जाती है; अतएव तू परिवार के लोगों से सुख पाने की मिथ्या आशा को त्याग दे और ज्ञान नेत्र खोल कर इस माया-मय क्षणभंगुर संसार से मुक्ति पाने के लिए निरन्तर गोविन्द भगवान् का भजन कर ॥१०॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते ।
रथ्याकर्पटविरचितकन्थः,
पुण्यापुण्यविवर्जितपन्थः ।
योगी योगनियोजितचित्तः,
रमते यद्बद्बालोन्मत्त ॥११॥

मार्ग में पड़े हुए कपड़े की कतरनों को चुनकर उनकी गुदड़ी बना लेने वाला, पाप-पुण्य की भावना से रहित निष्काम बुद्धि से कर्तव्य पालन करने वाला तथा आत्मा और परमात्मा में एकीकरण करने वाले योग में चित्त लगाने वाला योगी, बालक और उन्मत्त व्यक्ति के समान आत्मभाव में ही अनुरक्त रहता है। इस प्रकार के योग प्राप्ति के लिये हे मूढ़मते ! तू निरन्तर गोविन्द का भजन कर ॥११॥

---

* न त्वं नाहं नायं लोकस्तदपि किमर्थं क्रियते शोकः इति पाठान्तर। इसके अनुसार यह अर्थ होगा कि—(पाप-पुण्य से रहित मार्ग अपना लेने वाला व्यक्ति जब यह जानता हैं कि) न तू है, न मै हूं और न यह लोक है (क्योंकि ये सब एक दिन नष्ट होने वाला असत्य और मायारूप है) ऐसी दशा में सांसारिक वस्तुओं का अभाव होने पर तू शोक क्यों करता है ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते ।
नारीस्तन-भर-जघन-निवेशं,
दृष्ट्वा मिथ्या-†मोहावेशम् ।
एतन्मांसवसादि--विकारं,
मनसि विचारय वारम्बारम् ॥१२॥

हे मूढ़मति मानव ! तू अपनी स्त्री के पीन-पयोधर और पुष्ट जंघाओं की रचना देख-देख कर व्यर्थ ही क्यों मोह में पड़ता है ? यह शरीर एक दिन नष्ट हो जाना है और ये स्तन–जघन आदि शरीर के अंग महा-मलिन दुर्गन्धमय मांस और चर्बी आदि गन्दे पदार्थों से बने हुए हैं। अतएव तू इन्हें अपनी जीवन यात्रा का साधन मात्र समझते हुए अपने इस क्षणभंगुर शरीर की ओर भी देख कि न जाने कब इसका अन्त आ जाय। इन बातों को बारम्बार मन में विचार कर शान्तिचित्त से शुद्ध स्वरूप परमात्मा गोविन्द का निरन्तर भजन कर जिससे तू संसार के आवागमन के कष्ट से छूट कर गोविन्दमय हो जाये ॥१२॥

---

† 'मागा मोहावेअम्' पाठान्तर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं*भजमूढ़मते ।
गेयं गीतानाम सहस्त्रं,
ध्येयं श्रीपतिरूपमजस्त्रम् ।
नेयं सज्जनसङ्गे चित्तं,
देयं दीनजनाय च वित्तम् ॥१३॥

हे मूढ़मति मानव ! तू निरन्तर गोविन्द का भजन कर और इस असार संसार की चर्चा छोड़ कर गीता तथा भगवान् के सहस्त्र नाम का गान किया कर। साथ ही सांसारिक विषयों का ध्यान छोड़ कर लक्ष्मी पति विष्णु भगवान् के रूप का सदा ध्यान किया

---

* गोविन्द भगवान् के कार्यों के अनुसार उनके नाम भी पड़े हैं, जो सहस्त्रों की संख्या में हैं, अतएव गोविन्द भगवान् के पर्यायवाची शब्द कृष्ण, विष्णु, मुरारि आदि भी हैं। गोविन्द भगवान् के सहस्त्रनाम श्रीकृष्णसहस्त्रनाम और विष्णुसहस्त्रनाम के नाम से विख्यात हैं; इन दोनों में से किसी भी सहस्त्रनाम का पाठ किया जा सकता है।

† विष्णु पुराण में विष्णु शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार है कि—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कर और दुष्ट मनुष्यों का साथ छोड़कर सदैव सज्जनों के सङ्ग में चित्त लगाया कर, क्योंकि सज्जनों का संग करने से ज्ञान प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त धनपति होने पर तू अपने धन को उन दीन मनुष्यों को दिया कर जिन्हें उसकी नितान्त आवश्यकता हो और जो इसके वास्तविक अधिकारी हों। इस प्रकार दीन-दुखियों की सहायता करना भी गोविन्द भगवान् का भजन करना ही है क्योंकि दीन-दुखियों की सहायता करने वाले व्यक्ति से भगवान् प्रसन्न होते हैं और उसके पास धन की कमी नहीं होने देते ॥१३॥

यस्माद्विश्वमिदं सर्वं तस्य शक्त्या महात्मनः।
तस्यादेवोच्तते विष्णुर्विशधातोः प्रयेशनात् ॥

विश् धातु का अर्थ है घुसना या प्रवेश करना। जो अपनी शक्ति से समस्त विश्व के कण-कण में व्याप्त है उस महात्मा को विष्णुदेव के नाम से पुकारा गया है। विष्णु भगवान् के रूप का ध्यान—

उद्यत् कोटि दिवाकराभमनिशं शङ्खं गदां पङ्कजं,
चक्रं विभ्रतिमिन्दिरा-वसुमती-संशोभि-पार्श्व-द्वयम्।
कोटिराङ्गदहार—कुण्डलधरं पीताम्बरं कौस्तुभो,
द्दीप्तं विश्वधरं स्ववक्षसि लसच्छ्रीवत्सचिन्हं भजे ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते ।
भगवद्गीता किञ्चिदधीता,
गङ्गाजललवकणिका पीता
सकृदपि यस्य मुरारिसमर्चा
तस्य यमः कुरुते नहि चर्चा†॥१४॥

हे मूढ़मति मानव ! तू निरन्तर बारम्बार गोबिन्द का भजन कर। जिसने मानव जीवन का वास्तविक रूप समझाने वाली श्रीमद्भगवद्गीता* का कुछ भी अध्ययन

---

† येनाकारि मुरारेरर्चा तस्य यमः किं कुरुते चर्चा पाठान्तर।

* श्रीमद्भगवद्गीता—कुरुक्षेत्र के मैदान में जबकि कौरव और पाण्डवों की सेनाएं युद्ध के लिये तत्पर थीं उस समय दोनों सेनाओं के मध्य उपस्थित होकर अर्जुन ने देखा कि कौरव पक्ष में मेरे चाचा, दादा, आचार्य, मामा, भाई आदि आत्मीय जन युद्ध के लिये उपस्थित हैं, इनसे युद्ध करने और इन्हें मारने से मुझे महान पाप होगा। ऐसा विचार कर अर्जुन ने अपने शस्त्र त्याग कर श्रीकृष्ण से कहा कि मैं इन स्वजनों को मार कर विजय नहीं चाहता। यह सुन कर अर्जुन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किया है और जिसने श्रद्धा पूर्वक एक बिन्दु भी गंगा-जल * का पान किया है तथा जिसने एक बार भी

के सारथी बने सोलहकला सम्पूर्ण भगवान् श्रीकृष्ण ने युद्ध से विमुख अर्जुन का मोह नष्ट करने के लिये और कर्तव्य पालन के लिये जो उपदेश दिया वही उपदेश भगवद्गीता के नाम से प्रसिद्ध है। इस भगवद्-गीता में इतना ज्ञान भरा है कि यह पांचवा वेद कह-लाती है और वेदों की अपेक्षा पढ़ने तथा समझने में सरल है। ऐसी इस भगवद्गीता का जिसने कुछ भी अध्ययन किया है वह मोक्ष पाता है।

* गंगा जी मोक्ष दायिनी देव नदी हैं। पूर्वकाल में जिस समय कपिल मुनि के शाप से राजा सगर के साठ हजार पुत्र भस्म हो गये तब अपने पितृव्यों की मोक्ष प्राप्ति के लिये स्वर्ग से गंगा जी को लाने के निमित्त प्रथम अंशुमान ने और फिर उनके पुत्र राजा दिलीप ने घोर तपस्या की, किन्तु उन्हें सफलता नही मिली। पीछे दिलीप के पुत्र भागीरथ जी स्वर्ग से गंगा जी को लाने में सफल हुए और गंगाजल के स्पर्श से राजा सगर के पुत्रों को मोक्ष प्राप्त हुआ तथा गंगा जी भागीरथी गंगा जी कहलाई जिनके तट पर भारत के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

मुरारि * श्री विष्णु भगवान् की पूजा की है उस व्यक्ति की यमराज चर्चा भी नहीं कर सकते। कारण कि गीता के अध्ययन, गंगाजल का पान और श्री विष्णु भगवान् की पूजा करने वाला व्यक्ति यमराज

करोड़ों विद्वान् ऋषि-मुनि ज्ञानमय तपस्या करने के लिए दूर-दूर से आते रहे हैं और आज भी अनेक स्थानों पर गंगाजी के तट उन ऋषि-मुनियों के आश्रमों के नामों से विख्यात हैं तथा आज भी उन तटों पर उन ऋषि-मुनियों की तपस्या की महिमा व्याप्त है। श्रीमद्-भागवत, स्कन्द आदि अनेक पुराणों में इन पाप-नाशिनी मोक्षदायिनी, देव नदी गंगा महारानी की महान महिमा गाई गई हैं। ऐसी इन गंगा जी के जल का जिसने श्रद्धा पूर्वक एक बिन्दु भी पान किया है उसको निश्चित मोक्ष होती है।

* मुरारि –

मुर : क्लेशे च सन्तापे, कर्म भोगे च कर्मिणाम्।
दैत्य– भेदेऽप्यरिस्तेषां मुरारिस्तेन कीर्त्तितः॥

ब्रह्मवैवर्त पुराण श्रीकृष्ण जन्म खण्ड अ० ११०

मुर शब्द का अर्थ–क्लेश, सन्ताप, कर्मियों का कर्म

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के अधिकार से बाहर हो जाता है। यमराज उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते क्योंकि वह विष्णुलोक जाने का अधिकारी होता है ॥१४॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते।
कस्त्वं कोऽहं कुत आयातः,
का मे जननी को मे तातः।
इति परिभावय सर्वमसारं
विश्वं त्यक्त्वा स्वप्नविचारम् ॥१५॥

हे मूढ़मते ! तू बारम्बार गोविन्द भगवान् का भजन कर। तू कौन है ? मैं कौन हूं ? कहां से आया हूं ? मेरी माता कौन है ? मेरा पिता कौन है ? इन सब बातों पर यदि तू गम्भीर होकर विचार करेगा तो तेरा विवेक तुझे बता देगा कि यह दृश्यमान संसार वास्तव में

भोग और दैत्य भेद है। भगवान् विष्णु इन सबका नाश करने वाले हैं इसीसे इनका नाम मुरारी पड़ा है। इस मुरारि नाम का स्मरण करने से अथवा उनकी पूजा करने से जीव के क्लेश और सन्ताप अतिशीघ्र नष्ट हो जाते हैं। वामन पुराण में भगवान् विष्णु द्वारा मुर नामक राक्षस के मारे जाने का उल्लेख है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सारहीन है, इसमें कोई तत्व नहीं है। कोई किसी की माता है और न कोई किसी का पिता है, ये सब माया का चमत्कार है। ऐसा विचार कर इस विश्व को स्वप्नवत् समझते हुये इसका त्याग कर देना चाहिये और गोविन्द भगवान् का भजन करना चाहिये। इसी में तेरा कल्याण है ॥१५॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दंभज मूढ़मते।

*** का ते कान्ता-धन-गत-चिन्ता**
वातुल ! किं ते नास्तिक नियन्ता ?।
निजगति-सज्जन-सङ्गतिरेका,
भवति भवार्णवतरणे नौका ॥१६॥

---

* काते कान्ता कस्ते पुत्रः संसारोऽयमतीव विचित्रः। कस्य त्वं कः (वा) कुत आयातस्तत्त्वं चिन्तय मनसि (तदिदं) भ्रातः॥ यह प्रचलित पाठ है; किन्तु यह श्लोक आचार्यश्री का लिखा ज्ञात नहीं होता क्योंकि प्रथम तो इस श्लोक का आशय इससे पूर्व के श्लोक में आ चुका है; इसके अतिरिक्त इस श्लोक के अन्त में 'भ्रातः' शब्द दिया है जो संन्यासी द्वारा सांसारिक मनुष्यों से सम्बन्ध जोड़ना युक्ति संगत प्रतीत नहीं होता जो पाठ मूल में दिया गया है वह कलकत्ता से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे बावले ! तू स्त्री और धन की चिन्ता में क्यों डूबा रहता है तूने अपने ऊपर अपने परिवार का असीम उत्तरदायित्व क्यों ले रक्खा है ? क्या तेरा कोई नितान्त (शासक या प्रबन्धकर्त्ता) नहीं है ? प्रबन्धकर्त्ता ईश्वर के रहते इन बिषयों की चिन्ता नहीं करनी चाहिये क्योंकि जब "दांत न थे तब दूध दियो, जब दूध दियो का अन्न न दें है" ऐसी दशा में धन आदि की चिन्ता छोड़कर तुझे मनुष्य जीवन को सार्थक करने की चिन्ता करनी चाहिये । मनुष्य जीवन की सार्थकता ज्ञान द्वारा इस मायामय संसार के रहस्य को समझने से होती है । और ये ज्ञान सज्जनों की सङ्गति से प्राप्त होता है जो इस संसार रूपी समुद्र को पार करने के लिये नौका के समान हैं । अतएव हे मूढ़मति मानव ! तू सज्जनों की सङ्गति प्राप्त करने के लिये निरन्तर गोविन्द का भजन कर ॥१६॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते ।
यावज्जीवो निवसति देहे,
तावत्कुशलं पृच्छति गेहे ।

प्रकाशित बंगला भाषा में 'शङ्कराचार्य ग्रन्थमाला' से लिया गया है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गतवति वायौ देहापाये,
भार्या बिभ्यति तस्मिन् काये ॥१७॥

जब तक शरीर में जीव रहता है तब तक सभी परिचित लोग घर आकर कुशलता पूछते हैं किन्तु जब शरीर से प्राणवायु निकल जाती है अर्थात् जब जीव शरीर से अलग हो जाता है तब वह शरीर मृतक कहा जाता है, उस समय जीवन संगिनी भार्या भी उस मृतक शरीर से भय खाने लगती है। मृत्युलोग के इस प्रत्यक्ष रहस्य को समझ कर तू दैहिक विषय के मोह में न पड़ कर शाश्वत प्रभु गोविन्द से सम्बन्ध जोड़ने के लिये निरन्तर उनका भजन कर ॥१७॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते।
सुखतः क्रियते रामाभोगः,
पश्चाद्धन्त शरीरे रोगः।
यद्यपि लोके मरणं, शरणं
तदपि न मुञ्चति पापाचरणम् ॥१८॥

ओ मूढ़मति मानव! तू दाम्पत्य धर्म † को न

---

†दाम्पत्यधर्म-जननी जणे-तो वीरजण, या दाता या शूर।
नही तो रह बांझड़ी मती गंवावे नूर ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपना कर क्षणिक सुख प्राप्ति के लिये विषय भोग में ही लिप्त रहता है जिससे पीछे शरीर रोगग्रस्त हो जाता है। यद्यपि इस मृत्युलोक में अन्त समय मृत्यु की शरण ही जाना होगा; फिर भी कितने दुःख की बात है कि तू पाप करता ही रहता है, उनको छोड़ता नहीं और उन पापों के फलस्वरूप तुझे इस संसार में नाना प्रकार के दुःख भोगने पड़ते हैं। इस प्रकार मृत्यु के उपरान्त पुनर्जन्म के लिये गर्भावस्था के दुःख और जन्म के पश्चात् इस मृत्युलोक में अनेक प्रकार के दुःखों से बचना चाहता है तो पापाचरण और विषय भोग का परित्याग कर गोविन्द प्रभु का निरन्तर भजन कर ॥१८॥

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते।
कुरुते गङ्गासागरगमनं,
व्रतपरिपालनमथवा दानम्।
ज्ञानविहीनः सपुनरनेन,
ब्रजति न मुक्ति† जन्मशतेन ॥१९॥

---

† ज्ञानविहीने सर्वमतेन मुक्तिर्नभवति' इति। ज्ञानविहीने सर्वमनेनमुक्तिर्नभवति इति 'ज्ञानविहीनः सर्वमतेन भजति न मुक्ति, इतिपाठान्तर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे मूढ़मते ! तू निरन्तर गोविन्द का भजन कर; जिससे तुझे ज्ञान प्राप्त होगा। मनुष्य स्नान करने के लिये गंगा सागर * जाते हैं किन्तु वे गंगा सागर के महात्म्य को नहीं जानते। व्रत करते हैं किन्तु जिस देवी अथवा देवता का व्रत करते हैं उसकी व्रत में पूजा पद्धति को नहीं जानते। दान देते हैं किन्तु दान देने के योग्य पात्र को परखना नहीं जानते। इस प्रकार ज्ञान हीन होने पर उपरोक्त समस्त कार्यों से सौ जन्म में भी मुक्ति नहीं हो सकती ॥१६॥

---

* गङ्गा सागर-संगम कलकत्ते से सड़क मार्ग के द्वारा लगभग १४६ कि० मी० की दूरी पर है। यहां कपिल मुनि का आश्रम कहा जाता है और उनका मन्दिर भी है जो सदैव समुद्र के जल से घिरा रहता है किन्तु जब मकर संक्रान्ति पर मेले का समय आता है तब समुद्र २४० कि० मी० के लगभग मेले के लिये स्थान छोड़ देता है। बहुत प्राचीनकाल से यह स्थान अति पवित्र तीर्थ स्थान माना गया है। यहाँ श्रद्धा और दान करने की बडी महिमा है। (महाभारत-हरिवंश)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते।
योगरतो वा भोगरतो वा,
सङ्गरतो वाऽसङ्गरतो वा *।
यस्य ब्रह्मणि रमते चित्तं,
पश्यन्नन्दत्येव जगत्तम् † ॥२०॥

जिस मनुष्य का चित्त पर ब्रह्म के चिन्तन‡‡में रम रहा है वह चाहे योग में लिप्त रहता हो या मिथिला-पति राजर्षि विदेह जनक के समान साँसारिक भोगों में लिप्त रहता हो अथवा मनुष्यों के संसर्ग में रहने वाला हो, या एकाकी जीवन बिताने वाला हो, ऐसे महापुरुष के दर्शन मात्र से जगत के मनुष्य ही नहीं पशु पक्षी आदि सभी प्राणी आनन्दित होते हैं। अतएव इस ब्रह्म प्रेम के लिये तू निरन्तर गोविन्द भगवान् का भजन कर ॥२०॥

---

*'सङ्गविहीनःसङ्गरतो वा' इति वाणीविलास पाठ।

†'नन्दति दन्दति नन्दत्येव' वाणीविलास पाठ।

‡‡ब्रह्म चिन्तन में रमे व्यक्तिका दृष्टिमें संसार का रूप-

दुनियां में हूं दुनियां का तलबगार नहीं हूं।
बाजार से गुजरा हूं खरीदार नहीं हूं॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भजगोविन्दं भजगोविन्दं गोविन्दं भजमूढ़मते।
सुरतटिनीतरुमूलनिवासः
शय्या भूतलभजिनं वासः ।
सर्वपरिग्रह-भोगत्यागः,
कस्य सुखं न करोतिविरागः † ॥२१॥

भागीरथी गंगा महारानी के किनारे वृक्ष के नीचे निवास, और पृथ्वी ही शय्या तथा एकाकी जीवन एवं सब प्रकार के दान और सांसारिक भोगों का त्याग, ये वैराग्य के लक्षण है, इस प्रकार का वैराग्य किसको सुख नहीं देता अर्थात् सबको सुख देता है, क्योंकि वैराग्य में किसी प्रकार की भी चिन्ता न होने से वह स्वय आनन्दमय है। यदि तुझे ऐसे वैराग्य का अनुपम सुख भोगना है तो निरन्तर गोविन्द भगवान् का भजन कर ॥२१॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्य विरचिता, चर्पटपञ्जरिका भाषाटीका सहिता समाप्ता।

---

† यह श्लोक बंग भाषा की शङ्कराचार्य ग्रन्थ माला में नहीं है किन्तु प्रचलित पाठ में देखा जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

❀ श्रीगुरुवे नमः ❀

श्रीमज्जगद्गुरुभगवत्पादाद्यशङ्करा-चार्यविरचितस्त्रोत्राणि ।

प्रातः स्मरणम्

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वं
सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् ।
तत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं
तद्ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसङ्घः ॥१॥

प्रातः*—प्रातःकाल (उसे), स्मरामि—मैं स्मरण करता हूं तत्—जो, हृदि—प्राणि मात्र के हृदय में, संस्फुरद्—संस्फुरण रूप (प्रकाश स्वरूप), आत्मतत्त्वम्—आत्मा का वास्तविकस्वरूप (असली रूप), सच्चित्सुखम्—सच्चिदानन्द अर्थात् तीनों काल में रहने वाला चेतन तथा आनन्दस्वरूप है, परमहंसगतिम्—(नीर क्षीर—विवेक करने वाले हंस के समान) सत्य और असत्य के विवेक करने वाले परमहंस संन्यासियों की परम गति (शरण है), तुरीयम्—(जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति से भिन्न)

*संस्कृत शब्दों के आगे डैशों (—) का अर्थ यहाँ बराबर के चिह्नों (=) से लिया गया है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुरीय रूप है, **नित्यम्**–सदा रहने वाला (कभी भी नष्ट न होने वाला), **स्वप्नजागरसुषुप्तम्**–स्वप्नादि तीनों अवस्थाओं को, **अवैति**–जानता है या तीनों को जानता हुआ तीनों से भिन्न है, **तद्**–वही (जिसे पूर्व कह आया), **निष्कलम्**–कलारहित (निरवयव, निराकार), **ब्रह्म**–व्यापक परमेश्वर,–**अहम्**–मैं हूँ, **न च**–न कि, **भूतसङ्घः**-पञ्चभूतों का पुतला अर्थात् पञ्चभूतों का बना हुआ स्थूल एवं सूक्ष्म शरीर नहीं हूं।

भाव यह है कि प्रत्येक कल्याणकामी मुमुक्षु को प्रातः काल उठते ही इस रूप में अपने आपको स्मरण करना चाहिए; देहरूप में स्मरण नहीं करना चाहिए।

प्रातर्भजामि मनसां वचसामगम्यं
वाचो विभान्ति निखिला यदनुग्रहेण।
यन्नेति नेति वचनैर्निगमा अवोचु-
स्तं देवदेवमजमच्युतमाहुरग्र्यम् ॥२॥

प्रातः–प्रातःकाल (सर्व प्रथम मैं), **भजामि**–(उसका) चिन्तन करता हूं (जो), **मनसाम्**–मनोवृत्तियों से (और), **वचसामगम्यम्**–वाणी से अगम्य है। अर्थात् मनोवृत्ति का भी द्रष्टा होने के कारण उससे जाना नहीं जाता है, तथा वाणी से कहा नहीं जाता है। बल्कि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यदनुग्रहेण--जिस चेतन ब्रह्म के सत्ता स्फूर्तिरूप अनुग्रह से, **निखिलाः**–सम्पूर्ण, **वाचो विभान्ति**–वाणीप्रतीत होती हैं एवं, **यत्**–जिस परमात्मा को **निगमाः**–ऋग्, यजुः साम वेदों ने **नेति नेति वचनैः**–दृश्य वर्ग को निषेध करने वाले नेति नेति वाक्यों से, **अवोचुः**–(किसी-किसी प्रकार) कह पाया है, **तम्**–उसी परमेश्वर को (विद्वानों ने), **अजम्**–अजन्मा (और), **अच्युतम्**–अविनाशी, **अग्र्यम्**–सर्वश्रेष्ठ, **देवदेवम्**–दिव्य गुण सम्पन्न देवों का भी देव (महादेव) **आहुः**–कहा है भाव यह है कि सम्पूर्ण इन्द्रियो एवं मन का प्रकाशक, निषेध मूल से ही वेदों का प्रतिपाद्य, तत्त्ववेत्ता विद्वानों का समाराध्य देव सर्वात्मा परमेश्वर को आत्मभाव से भजन-चिन्तन प्रातः काल उठते ही करना चाहिए ।

प्रातर्नमामि तमसः परमर्कवर्णं
पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् ।
यस्मिन्निदंजगदशेषमशेषमूर्त्तौ
रज्ज्वां भुजङ्गम इव प्रतिभासितं वै ॥३॥

प्रातः–प्रातःकाल (उठते ही उसे), **नमामि**–मैं नमस्कार करता हूं (जो), **तमसः**–अज्ञान एवं मायारूप अंधकार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

से, **परम्**–अत्यन्त पर अर्थात् विलक्षण है, **अर्कवर्णम्**–सूर्य के समान स्वयं प्रकाश एवं सबका प्रकाशक, **पूर्णम्**—सर्वत्र परिपूर्ण, **सनातनपदम्**—सदा रहने वाला (एवं), **पुरुषोत्तमाख्यम्**–पुरुषोत्तम जिसका नाम है। **यस्मिन्**–जिस, **अशेषमूर्त्तौ**–सर्व से अभिन्न सर्वाधिष्ठान परमेश्वर में, **इदम्**–यह (सामने दीखने वाले), **अशेषम्**–सम्पूर्ण, **जगत्**–जड़चेतन संसार, **वै**–निःसन्देह **रज्ज्वाम्**–रज्जु में, **भुजङ्गम् इव**—सर्प के जैसे, **प्रतिभासितम्**—प्रतीत होते हैं।

भाव यह है कि देशकालवस्तु परिच्छेद शून्य सर्वाभिन्न सर्वाधिष्ठान अज्ञानान्धकार से विलक्षण सर्व का प्रकाशक, स्वयं प्रकाश सनातन पुरुष पुरुषोत्तम को ही नमस्कार करना चाहिए।

श्लोकत्रयमिदं पुण्यं, लोकत्रयविभूषणम्।
प्रातःकाले पठेद्यस्तु, स गच्छेत्परमं पदम् ॥४॥

जो कोई भी तीनों लोकों के भूषण इन तीनों श्लोकों का प्रातःकाल सदा पाठ करेगा वह अवश्य परम पद प्राप्त करेगा।

—卐—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आत्मपंचकम्

नाहं देहो नेन्द्रियाण्यन्तरङ्गं,
नाहंकारः प्राणवर्गो न बुद्धिः ।
दारापत्यक्षेत्रवित्तादिदूरः,
साक्षी नित्यः प्रत्यगात्मा शिवोऽहम् ॥१॥

नाहं देहः—मैं स्थूल देह नहीं हूँ (क्योंकि स्थूल शरीर पञ्चीकृत पञ्चमहाभूतों का बना हुआ है । अतएव स्थूल देह मैं नहीं और स्थूल देह के धर्म नाम-रूप-जन्म-मरण-स्थूलत्व-कृशत्व मानापमानादि मुझे स्पर्श भी नही कर सकते हैं) **न इन्द्रियाणि**—चक्षुरादि दश इन्द्रियाँ मैं नहीं हूँ, (क्योंकि ये भी अपञ्चीकृत पञ्च महाभूतों के पृथक्-पृथक् सत्त्वांश से पञ्च ज्ञान इन्द्रियां और रजो अंश से पञ्च कर्मेन्द्रियाँ हुए हैं । अतएव देखना, सुनना, स्पर्श करना, रस लेना, सूंघना बोलना चलना, पकड़ना, छोड़ना, मलमूत्र का त्यागना इन इन्द्रियों का ही धर्म है, मुझ असङ्ग आत्मा में ये सब अज्ञान से प्रतीत होते हैं) **नान्तरङ्गम्**—मैं मन भी नहीं हूँ । **नाहङ्कारः**—अहङ्कार मैं नही हूं । **न बुद्धिः**—बुद्धि भी मैं नहीं हूँ (क्योंकि अपंचीकृत पञ्चमहाभूतों के मिले हुए सत्त्व अश से अन्तःकरण बना है और संकल्प-विकल्प

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करने से उसी का नाम मन है। मैं-मैं करने से अहंकार एवं किसी वस्तु का निश्चय करना रूप व्यापार करने से उसी का नाम बुद्धि पड़ गया है। अतएव काम-क्रोधादि, समझ-बेसमझी, सुख-दुखादि इन्हीं के धर्म हैं, मेरे नहीं)। **प्राणवर्गः**—प्राणों का समुदाय (भी मैं नहीं हूँ, क्योंकि ये प्राणभी अपञ्चीकृत पंचमहा-भूतों के मिले हुए रजो अंश से उत्पन्न हुए हैं। अतएव क्षुधा पिपासादि धर्म भी इनके हैं, मेरे नहीं)। **दारापत्यक्षेत्र-वित्तादिदूरः**—स्त्री, पुत्र, क्षेत्र, धन, माल, मोटर-गाड़ी इत्यादि से मैं अत्यन्त दूर हूँ। (अतः इनमें मेरी ममता भी नहीं हो सकती है) **अहम्**—मैं (तो) **साक्षी**—साक्षी **नित्यः**—नित्य (सदा रहने वाला) **प्रत्यगात्मा**—अन्तरात्मा **शिवः**—कल्याण स्वरूप शिव हूँ।

रज्ज्वज्ञानाद् भाति रज्जुर्यथाहिः
स्वात्माज्ञानादात्मनो जीवभावः।
आप्तोक्त्या भ्रान्तिनाशे स रज्जु
र्जीवो नाहं देशिकोक्त्या शिवोऽहम् ॥२॥

यथा—जिस प्रकार (मन्द अन्धकार में) **रज्ज्वज्ञा-नाद्**—रस्सी के अज्ञान से। **रज्जुः**—रस्सी (ही) **अहिः**—सर्व रूप से। **भाति**—प्रतीत होने लग जाती है (क्योंकि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सर्प उत्पत्ति में तथा सर्प की प्रतीति में रज्जु के अज्ञान के सिवा अन्य सर्प और सर्पिणी इत्यादि एक भी वहाँ पर नहीं है। अतः अज्ञान से रज्जु ही सर्प रूप से प्रतीत होती है, ठीक वैसे ही)। **स्वात्माज्ञानाद्**—अपने आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा को न जानने से। **जीवभावः**—जीवभाव अर्थात् कर्तृत्व, भोक्तृत्व, सुख दुःख इत्यादि। **आत्मनः**—आत्मा के ही प्रतीत होने लगते हैं (वस्तुतः ये सब आत्मा में हैं नहीं) **हि**—क्योंकि (किसी) **आप्तोक्त्या**—यथार्थ वक्ता के कहने से। **भ्रान्तिनाशे**—भ्रम के नष्ट हो जाने पर। **सः**—वह सर्प (नहीं रह जाता, किन्तु)। **रज्जुः**—रस्सी ही शेष रह जाती है (वैसे ही) **दैशिकोक्त्या**—श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ आचार्य के उपदेश से (यथार्थ परमात्मतत्त्व का अपरोक्ष हो जाने पर) **नाहं जीवः**—मैं जीव नहीं हूँ अर्थात् पूर्वोक्त कर्तृत्वादि धर्मवाला दीन हीन जीव मैं नहीं हूं (किन्तु) **अहम्**—मै **शिवः**—कल्याण स्वरूप शिव ही हूं।

आभातीदं विश्वमात्मन्यसत्यं,
सत्यज्ञानानन्दरूपे विमोहात्।
निद्रामोहात्स्वप्नवत्तन्नसत्यं,
शुद्धःपूर्णो नित्य एकः शिवोऽहम् ॥३॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सत्यज्ञानानन्दरूपे– सत्य, ज्ञान तथा आनन्द स्वरूप **आत्मानि**–मुझ आत्मा में। **असत्यम्**- असत्य अर्थात् न होता हुआ भी। **विमोहात्**–अनादि अज्ञान से। **इदं विश्वम्**–यह संसार दीख रहा है। **निद्रामोहात्**–जैसे निद्रा रूप दोष से। **स्वप्नवत**–स्वप्न का संसार न होता हुआ भी दीखता है, वैसे ही। **तत्**–वह (दीखने वाला संसार स्वप्न के समान ही) **न सत्यम्**–सत्य नहीं है (किन्तु मिथ्या है) **अहम्**–मैं (तो) **शुद्धः**–माया मल से रहित। **पूर्णः**–सर्वत्र परिपूर्ण। **नित्यः**–सदा रहने वाला **एकः**–एक अद्वितीय। **शिवः**–कल्याण स्वरूप शिव हूं।

मत्तो नान्यत्किञ्चिदत्रास्ति दृश्यं,

सर्वं बाह्यं वस्तु मायोपकल्पितम्।

आदर्शान्तर्भासमानस्य तुल्यं,

मय्यद्वैते भाति तस्माच्छिवोऽहम् ॥४॥

मत्तः--मुझ (एक अखण्ड अद्वैततत्त्व) से। **अन्यत्**--भिन्न **किञ्चित्**--कुछ भी। **दृश्यम्**--दृश्य वर्ग (परमार्थतः) **नास्ति**--नहीं है(यह)**सर्वम्**--सभी। **बाह्यम्**--बाहर दीखने वाली। **वस्तु**--वस्तु। **मयि**--मुझ। **अद्वैते**--अद्वैत तत्त्व में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आदर्शान्तर्भासमानस्य--दर्पण में भासमान कल्पित पदार्थ के। **तुल्यम्**--समान। **मायोपकल्पितम्**--अनादि अनिर्वचनीय माया से कल्पित। **भाति**--प्रतीति मात्र है **तस्मात्**--इसलिये। **अहम्**--मै (तो) **शिवः**--कल्याण स्वरूप। शिवः रूप हूँ।

नाहं जातो न प्रवृद्धो न नष्टो,
देहस्योक्ताः प्राकृताः सर्वधर्माः।
कर्तृत्वादिश्चिन्मयस्यास्ति नाहं,
कारस्यैव ह्यात्मनो मे शिवोऽहम् ॥५॥

नाहं जातः- मैं जन्मा नही हूँ, **न प्रवृद्धः**--मै बड़ा या वृद्धनहां, **न नष्टः**--(अतएव कभी मै) नष्ट नहीं हुआ, न हो सकता हूँ। (किन्तु), **प्राकृताः**--प्रकृति से होने वाले। **सर्वधर्मा**—जन्म मरणादि, षड्विकार। **देहस्य**—स्थूल देह के (ही धर्म)। **उक्ताः**—कहे गये हैं (मेरे नहीं)। **कर्तृत्वादिः**—कर्तापना, भोक्तापन सुखित्व दुःखित्वादि धर्म। **अहङ्कारस्यैव**—अहङ्कार के ही हैं अर्थात् चिदाभाष के ही हैं। **चिन्मयस्य**—शुद्ध चैतन्य स्वरूप। **आत्मनः**—आत्मा के। **न हि**—नहीं। **अस्ति**—हैं (अतएव)। **अहम्**—मैं (तो)। **शिवः**—कल्याण स्वरूप शिव हूं।

❀)=====(❀

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आत्मषट्कम्

मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं
न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे ।
न च व्योमभूमी न तेजो न वायु-
श्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥१॥

मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तानि--मन, बुद्धि, अहङ्काह और चित **नाहम्**--मैं नहीं हूं। क्योंकि अपञ्चीकृत पञ्च महाभूतों के मिले हुए सत्त्वांश से एक अन्तःकरण बना है और उसी के व्यापार भेद से ये चार नाम पड़ गये हैं। अर्थात् सङ्कल्प - विकल्प करने से मन निश्चय करने से बुद्धि, अहं अहं व्यापार करने से अहङ्कार और चिन्तन करने से चित्त नाम पड़ गया है।

श्रोत्रजिह्वे—कान और जीभ। **न च**—भी मैं नहीं हूं। [इसलिये सुनना और रस लेना व्यापार भी मेरे नहीं हैं)। **घ्राणनेत्रे**—नाक और आंख। **न च**—भो मै नहीं हूं। (अतएव सूंघना और देखना रूप व्यापार मेरे नही हैं। क्योंकि पंच ज्ञानेन्द्रियाँ भी अपंचीकृत पंचमहाभूतों के पृथक् पृथक् सत्त्वांश से बने हुए हैं। मैं तो भूत कल्पना का अधिष्ठान व्यापक ब्रह्म हूं।)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्योमभूमी—आकाश और धरती। **न च**—भी मैं नहीं हूं। (एवं)। **न तेजः**—नअग्नि और। **नवायुः**—न हवा ही (मैं हूं)। **अहम्**—मैं (तो)। **चिदानन्दस्वरूपः**—चैतन्य तथा आनन्दस्वरूप। **शिवः**—शिव हूं। **शिवोऽहम्**—शिव हूं। भाव यह है कि मुमुक्षुओं को सदा भूत भौतिक पदार्थों से मैंपन हटाकर सच्चिदानन्द शिव को ही आत्म भाव से सदा चिन्तन करना चाहिये।

न च प्राणवर्गो न पञ्चानिला मे
न वा सप्तधातुर्न वा पञ्चकोशः।
न वाक्पाणिपादौ न चोपस्थपायू
चिदानन्दरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम् ॥२॥

प्राणवर्गः—प्राण, अपान, समान, उदान, और व्यान इन पंच प्राणों का समुदाय। **न च**—मैं नहीं हूं (क्योंकि ये तो अपञ्चीकृत पंचमहाभूतों के मिले हुए रजों अंश से उत्पन्न अध्यात्म वायु के व्यापार भेद से पांच नाम पड़ गये हैं। नाभि से उठकर नासिका द्वारा गमनागमन करने से प्राण, नाभि से नीचे मलमूत्र का अधोनयन करने के कारण अपान, उदरस्थ खाये-पीये अन्न जल को समीकरण के कारण समान, कण्ठ में रह कर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्नादि का विभाग करने के कारण उदान तथा सम्पूर्ण शरीर में रह कर बल प्रदान करने से व्यान नाम पड़ गया है। अतएव)। **मे**—मुझ सच्चिदानन्दस्वरूप आत्मा के। **न पञ्चानिलाः**—प्राण, अपानादि पञ्च प्राण वायु तथा नाग, कूर्म, कृकल देवदत्त और धनंजय रूप उपप्राण भी नहीं हैं। (क्योंकि ये सभी प्राण, उप-प्राण, अपञ्चीकृतपञ्च महाभूतों के रजो अंश से उत्पन्न हुये हैं। मै तो भूतातीत हूं।)

सप्त धातुः—रस, रक्त, मांस, मेद, मज्जा, अस्थि और वीर्य रूप सात धातु मेरे। **न वा**—नहीं हैं (क्योंकि ये सब स्थूल देह में ही हैं, सूक्ष्म देह में भी नही, तो भला आत्मा में कैसे रह सकते हैं।) **पञ्चकोशः**-पञ्च-कोश (भी मैं)। **न वा**—नहीं हूं (क्योंकि अन्नमयकोश स्थूल शरीर रूप है, प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय कोश सूक्ष्म शरीर रूप है तथा आनन्दमय कोश कारण शरीर रूप है। मैं पंच कोशातीत आत्मा हूं) **पाणिपादौ**-हाथ, पैर तथा। **न वाक्**—वाणी इन्द्रियां भी मैं नहीं हूँ। **उपस्थपायू**—शिश्न तथा गुद भी मैं। **न च**—नहीं हूं (क्योंकि ये पंच कर्म इन्द्रियां भी अपंचीकृत पंच महा-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भूतों के रजो अंश से बने हैं। **अहम्**– (मै तो) **चिदानन्दस्वरूपः**–चेतन आनन्द रूप। **शिवः**–कल्याण स्वरूप शिव हूँ। **शिवोऽहम्**–शिव हूँ।

न मे रागद्वेषौ न मे लोभमोहौ ,
मदो नैव मे नैव मात्सर्यभावः ।
न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्षः
चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥३॥

रागद्वेषौ—राग और द्वेष। **न मे**—मुझ विशुद्ध चैतन्य आत्मा में नहीं हैं (क्योंकि इष्ट वस्तु में राग और अनिष्ट वस्तु में द्वेष होता है, जो कि अन्तःकरण का धर्म है। मेरा कोई भी इष्टानिष्ट नहीं है, फिर राग द्वेष मुझ में क्यों होने लगे।) **लोभमोहौ**–लोभ और मोह अर्थात् ममता भी। **न मे**-मुझ में नहीं हैं (क्योंकि अन्य व्यक्ति के पास रही हुई वस्तु को अन्याय से लेने की इच्छा का नाम लोभ है तथा अपने पास प्राप्त वस्तु की ममता का नाम मोह है। ये भी मन के ही धर्म हैं। मैं तो आप्त काम आत्मा हूं। अतः लोभ मोह मुझमें नहीं हो सकते। अज्ञान जन्य भ्रान्ति के कारण मन के धर्म मुझमें भान होते थे वे सब अज्ञान के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साथ ही नष्ट हो गये।) **मदः**—अहंकार अर्थात् गर्व। **मे**—मुझ विशुद्ध आत्मा में (कभी भी)। **न एव**—नहीं आ सकता (क्योंकि यह तो अनात्माभिमान से हुआ करता है) **मात्सर्यभावः**—ईर्ष्या भाव (भी मुझमें) **नैव**—नहीं है (क्योंकि यह परोत्कर्ष को न सहने के कारण हुआ करता है, मुझसे भिन्न कोई नहीं है फिर ईर्ष्या कैसे हो) (शास्त्र विहित कर्मानुष्ठान से धर्म उत्पन्न होता है, जो अर्थ और काम का जनक है एवं निष्काम भाव से किये जाने पर अन्तःकरण शुद्धि का कारण हैं। वह)

न धर्मः—धर्म भी मुझ में नहीं है (यह भी कर्म जन्य होने से विकारी मन का ही है, मुझ निर्विकार आत्मा का नहीं है), **अर्थः**—धन, पुत्रादि इस लोक तथा स्वर्गादि लोक के विषयों को अर्थ कहते हैं, वह अर्थ भी **न च**—(मुझे आवश्यक) नहीं है। **कामः**—शरीरेन्द्रियों में अधिकाधिक विषयों के भोगने की शक्ति तथा तज्जन्यसुख को काम कहते हैं, वह काम भी मुझे। **न**—नहीं चाहिए (क्योंकि मैं सुखरूप हूँ)। **मोक्षः**—कारण सहित, त्रिविध दुखों की निवृत्ति तथा परमानन्द की प्राप्ति रूप मोक्ष भी मुझे। **न**—नहीं चाहिए (क्योंकि मैं नित्य-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुक्त) **चिदानन्दरूपः**—सच्चिदानन्दस्वरूप। **शिवोऽहम्**—शिव हूँ। **शिवोऽहम्**—शिव हूँ। (जब मुझमें बन्धन ही नहीं तो मुक्ति की क्या आवश्यकता है।)

न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखं,
न मन्त्रो न तीर्थं न वेदो न यज्ञः।
अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता,
चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥४॥

न पुण्यम्—मुझमें पुण्य नहीं एवं। **न पापम्**—पाप भी नहीं है (क्योंकि शास्त्रविहित कर्मानुष्ठान से पुण्य तथा शास्त्र निषिद्ध कर्मानुष्ठान से पाप होता है। जब मुझ विशुद्ध आत्मा में कर्तृत्व नहीं, तो कर्मजन्य पुण्य पाप मुझमें कैसे रह सकेंगे। एवं मुझमें। **न सौख्यम्**—अनुकूल पदार्थ की प्राप्ति तथा उपभोग जन्य सुख भी नहीं हैं। **न दुःखम्**—प्रतिकूल पदार्थ की प्राप्ति एवं तदुपभोग जन्य दुःख भी मुझमें नहीं है। (क्योंकि ये भी साभास अन्तः करण के ही धर्म हैं, मुझ निर्विकार आत्मा के नहीं है।) **न मन्त्रः**—मेरे लिये कोई मन्त्र नहीं। **न तीर्थं**—तीर्थ नहीं, **न वेदः**—वेद नहीं एवं। **न यज्ञः**—यज्ञ भी नहीं हैं (क्योंकि ये सब साधन अपवित्र को पवित्र करते हैं। मैं सदा पवित्र-शुद्ध ज्ञान स्वरूप हूं। अतः ये सब मुझमें

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizaotion by eGangotri

नही हैं।) **अहम्**—(अतएव) मैं। **भोजनम्**—प्रिय, मोद तथा प्रमोद वृत्ति भी। **नैव**—नहीं हूं (क्योंकि ये मन के परिणाम हैं) **भोज्यम्**--प्रिय आदि वृत्ति की उत्पत्ति के निमित्त इष्ट वस्तु नहीं हूं अथवा प्रिय आदि मनो-वृत्ति में आनन्दाभास भी मैं नहीं हूँ (किन्तु उस प्रति-बिम्ब का बिम्ब भूत सुख मैं हूँ।) **न भोक्ता**---भोक्ता भी मैं नही हूं (क्योंकि सुख, दुःखादि भोग का आश्रय ही भोक्ता कहलाता है, सुखादि का साक्षी भोक्ता नहीं कहा जाता। अतः साभास अन्तःकरण ही भोक्ता है। मैं तो भोक्ता, भोज्य और भोजन इस त्रिपुटी का साक्षी शुद्ध चेतन हूँ।) **चिदानन्दरूपः**—चेतन, आनन्द स्वरूप **शिवः**--कल्याण रूप शिव। **अहम्**--मैं हूँ। **शिवोऽहम्**--शिव मैं हूँ (इस प्रकार मुमुक्षुओं को सदा चिन्तन करना चाहिये।)

न मे मृत्युङ्का न मे जातिभेदः,
पिता नैव मे नैव माता न जन्म।
नबन्धुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्यः,
चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥५॥

मे—मुझ नित्य अमर आत्मा में। **मृत्युशङ्का**—मरने की शङ्का। **न**—नहीं है, क्योंकि प्राण वियोग का नाम ही

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मरण है। मुझमें प्राण का संयोग ही न हुआ तो फिर प्राण का वियोग कैसे हो सकेगा अतः स्थूल देह का ही मरण होता है। एवं) **मे**–मुझ व्यापक आत्मा में। **जातिभेदः**–मनुष्य, पशु पक्षी आदि या ब्राह्मण, क्षत्रिय इत्यादि जाति भेद भी। **न**–नहीं है। (क्योंकि यह जाति भेद भी स्थूल देह में ही है, सूक्ष्म देह तथा कारण देह में भी नहीं है, तो फिर देहातीत आत्मा में कैसे जाति भेद रह सकता है) **पिता**–पिता जनक भी। **नैव**– मुझ नित्य आत्मा के नहीं हैं। एवं **माता**--माता-जननी भी। **मे नैव**--मेरे नहीं हैं (क्योंकि जो जन्य है उसी के जननी-जनक हो सकते हैं। अतः ये भी देह के ही हैं, आत्मा के नहीं।) **न जन्म**--मेरा जन्म भी नहीं होता (क्योंकि जन्मने वाले की निश्चित मृत्यु है। मैं तो अजन्मा-अविनाशी नित्य आत्मा हूँ।) **न बन्धुः**--मेरे भाई भी नहीं हैं (क्योंकि समान माता पिता से उत्पन्न हुए व्यक्ति का ही भाई हो सकता है। मुझ अजन्मा का नहीं) **न मित्रम्**--मेरे मित्र नहीं हैं। (क्योंकि परस्पर हितचिंतक का नाम मित्र है। अतएव मेरे शत्रु भी नहीं है। न मेरे कोई हित - अहित चिन्तक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हैं न मैं किसी का हूँ, मैं तो उदासीन आत्मा हूँ। **गुरु**--हित का उपदेशक, मार्ग दर्शक एवं। **शिष्यः**--गुरु भक्त रूप शिष्य भी। **नैव**–मेरे नहीं हैं, (क्योंकि अद्वितीय आत्मा में गुरुत्व शिष्यत्व भी अज्ञान से कल्पित ही हैं। अतः) **चिदानन्दरूपः**– चेतन आनन्दरूप। **शिवोऽहम्**–शिव ही मैं हूँ। **शिवोऽहम्**–शिव ही मैं हूँ।

अहं निर्विकल्पो निराकाररूपो,
विभुर्व्याप्य सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणि।
सदा मे समत्वं न मुक्तिर्न बन्धः,
चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥६॥

अहम्--मैं विशुद्ध चैतन्य मायातीत आत्मा। **निर्विकल्पः**-विकल्प का विषय नहीं हूँ (क्योंकि कुछ विशेषण होने पर ही कल्पना हो सकती है। निर्विशेष में कोई कल्पना नाम, रूप, गुण, क्रिया सम्बन्ध इत्यादि की बनाई नहीं है।) तथा, **निराकाररूपः**–आकार वाला भी मैं नहीं हूँ, (क्योंकि माया के कार्य आकाश में भी आकार नहीं है, तो मायाधिष्ठान चेतन में आकार कैसे हो सकेगा मैं तो आकाशादि में भी) **विभुः**–व्यापक हूँ अर्थात्। **सर्वेन्द्रियाणि**–व्यष्टि रूप से सभी इन्द्रियों में तथा। **सर्वत्र**–समष्टि रूप से सभी देशकाल में। **व्याप्य**–

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्याप्त होकर स्थित हूँ। (कार्य की अपेक्षा कारण व्यापक माना जाता है। इस प्रकार सम्पूर्ण जगत् का उपादान कारण माया है और वह माया अपने कार्य भूत, भौतिक पदार्थों में व्याप्त है पर। माया भी तो ब्रह्म के किसी एक देश में ही है। यहाँ पर निरवयव में देश की कल्पना समझाने के लिये है, वस्तुतः नहीं है।) **सदा**--सदा तीनों काल में। **मे**--मुझ शुद्ध चेतन में। **समत्वम्**--समभाव है (विषमता की गन्ध मात्र भी नहीं है।) **न मुक्तिः**--मुझमें मुक्ति नहीं है। (क्योंकि मैं सदा मुक्तरूप हूँ। नित्य मुक्त आत्मा में अज्ञान से कर्तृत्वादि बन्धन प्रतीत होता था। जब मुझ चिन्मात्र आत्मा में अज्ञान ही नहीं है तो फिर) **न बन्धः**--बन्धन भी नहीं। (जब बन्धन नहीं है, तो मुक्ति की भी क्या आवश्यकता अतः नित्य मुक्त आत्मा में बन्ध तथा मोक्ष कल्पित है।) **चिदानन्दरूपः**--चेतन, आनन्द। **शिवः**--कल्याण स्वरूप शिव हूँ। **शिवोऽहम्**--मै शिव ही हूँ।

* * *

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कमल प्रिन्टिंग प्रेस

ज्वालापुर रोड, जमना पैलेस के सामने

हरिद्वार-२४६ ४०१

फोन :- १०२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma College, Varanasi